International Advance Journal of Engineering, Science and Management (IAJESM)
Multidisciplinary, Indexed, Double Blind, Open Access, Peer-Reviewed, Refereed-International Journal.
SJIF Impact Factor =7.938, January-June 2024, Submitted in April 2024, ISSN -2393-8048

कर्म, भक्ति, ज्ञान की त्रिवेणी श्रीमद् भगवद गीता

ममता पंत, शोधार्थी, निर्वाण यूनिवर्सिटी, जयपुर
नितिन कुमार, आचार्य, निर्वाण यूनिवर्सिटी, जयपुर

सारांश

श्रीमद्भगवद्गीता तीन प्रमुख आध्यात्मिक मार्गों दृ कर्मयोग, भक्तियोग और ज्ञानयोग दृ की त्रिवेणी का प्रतीक है। यह त्रैविधिक संगम मानव जीवन को समग्र और संतुलित रूप से आध्यात्मिक उन्नति की दिशा में ले जाता है। कर्मयोग हमें निष्काम भाव से कर्तव्य करने की प्रेरणा देता है, जहाँ कार्य में लिप्त रहते हुए भी व्यक्ति फल की इच्छा से मुक्त रहता है। भक्तियोग में पूर्ण श्रद्धा, प्रेम और समर्पण के माध्यम से ईश्वर के प्रति एक गहरा संबंध स्थापित किया जाता है। वहीं ज्ञानयोग आत्मा, ब्रह्म और संसार के यथार्थ स्वरूप को जानकर अज्ञान का नाश करता है और मोक्ष की ओर ले जाता है। गीता इन तीनों मार्गों को परस्पर विरोधी न मानकर, एक–दूसरे के पूरक मानती है। कर्म में गति है, भक्ति में शक्ति है और ज्ञान में मुक्ति है। इनका समन्वय जीवन को समृद्ध, शांत और उद्देश्यपूर्ण बनाता है। इस त्रिवेणी के माध्यम से गीता व्यक्ति को मोह से मुक्त कर, आत्मज्ञान और अंततः मोक्ष की ओर अग्रसर करती है।

प्रस्तावना

ज्ञान व प्रकाश की अगाध जलराशि जिसमें समाहित है, वह है श्रीमद् भगवद् गीता। इक्कीसवीं सदी के इस मोड़ पर भी गीता क्यों प्रासंगिक है? क्योंकि आज के वैज्ञानिक युग में भी हमारे भीतर धृतराष्ट्र सा अंधा मोह, दुर्योधन सा अहंकार और गांधारी की विवेकहीनता कायम है। श्रीमद् भगवद् गीता एक ज्ञान ग्रंथ है, और भगवान श्रीकृष्ण एक प्रकाश स्तम्भ हैं। महाभारत में धर्मक्षेत्र कुरूक्षेत्र में पांडवों और कौरवों का महायुद्ध विस्तार से वर्णित है जो ऐतिहासिक होने के अतिरिक्त प्रतीकात्मक भी है। जिसमें धृतराष्ट्र मोह के कारण अंधा है। दुर्धोधन दुर्वृत्तियों और अहंकार से ग्रस्त है। गांधारी ने विवेक के नेत्रों को बंद कर लिया है। भीष्म कुवृत्तियों में फँसी हुयी पवित्र बुद्धि है। अर्जुन विचलित मन है तथा कृष्ण इन सभी का समाधान लिए प्रकाश पूर्ण बुद्धि। भगवद् गीता में संवाद शैली से मानव मात्र की समस्याओं का व्यवहारिक समाधान किया गया है। इसमें उल्लिखित श्रीकृष्ण और अर्जुन का मैत्रीपूर्ण संवाद अत्यन्त प्रेरणादायक है। वह व्यथित मानव के जीवन में आशा का संचार करता है। यह एक छोटा सा प्रकाश दीप है जो कि अंधकार राशि को ललकार कर उसे विदीर्ण कर देता है, तथा अगणित लघुदीपों को प्रकाश प्रदान करने की सामर्थ्य देकर स्वयं कृतार्थ हो जाता है। यह ज्ञान और ज्ञानग्रंथ श्रीमद् भगवद् गीता की महिमा है।

श्रीमद् भगवद् गीता को विश्व के समस्त देशों में तथा लगभग सभी भाषाओं में श्रद्धापूर्वक पढ़ा जाता है। भारत के अगणित आचार्यों ने गीता पर विभिन्न दृष्टियों के भाष्य लिखे हैं। विश्व के अनेक विद्वानों ने इसे शिरोधार्य मानकर अपनी व्याख्याएँ प्रस्तुत की है।

आज की परिस्थितियों में गीता की उपयोगिता स्वयंसिद्ध है प्रगति के पथ पर बढ़ने के लिए पुरूषार्थ आवश्यक है। कर्म के बिना विकास की बात कोरी कल्पना है। आधुनिक युग में वैज्ञानिक प्रगति ने विकास के नाम पर सुख सुविधाओं के अनेकों साधन तो अवश्य दिये हैं। किन्तु समस्याएँ व दुख अनेक दे दिये हैं। जहाँ भौतिक उन्नति के कारण वह शारीरिक श्रम के अभाव में ही दुख व परेशानी का सूत्रपात होता है जहाँ एक ओर भौतिक सुख सुविधाओं के कारण औद्योगिक क्रान्ति का सूत्रपात हुआ है, तथा जीवन स्तर ऊँचा हुआ है। वहीं दूसरी ओर प्रतिस्पर्धा, हिंसा, आपराधिक प्रवृत्ति एवं आत्महत्याओं में वृद्धि हो रही है। मनुष्य की प्रमुख समस्याओं में भय, चिन्ता एवं समुचित जीवनयापन, कर्म का अभाव, आलस्य, प्रतिस्पर्धा, हिंसा, आपराधिक प्रवृत्ति एवं आत्महत्याओं में वृद्धि होना है। आतंकवाद के विकराल रूप ने समस्त विश्व के जनजीवन को असुरक्षित कर दिया है। परिणामतः मानव की अंतश्चेतना में एक विचित्र सी घुटन, अशान्ति और व्याकुलता आ गई है। समस्त सुख सुविधाओं के होने के बाद भी वह क्लांत अशान्त और भ्रमित हो गया है। वाहय जगत की आकर्षक भव्यता के पृष्ठ में एक भयावह तथा अकथनीय अशान्ति के उद्रेक से सभ्य समाज स्वयं को ठगा हुआ महसूस कर रहा है। आधुनिकता के अभद्र रूप ने जीवन धारा मे मानों विष घोल दिया है। ऐसी स्थिति में मनुष्य एवं समाज के लिए पथ–प्रदर्शक एवं प्रेरणादायक जीवन दर्शन श्रीमद् भगवद् गीता अति आवश्यक है। इसमें जीवन जीने की कला को प्रमुखता से वर्णित किया गया है। इसमें कर्मयोग, ज्ञानयोग एवं भक्तियोग का समन्वय अवश्य है पर यह मनुष्य को एक ऐसी जीवन पद्धति से परिचित कराती है। जिसका पालन कर वह भयमुक्त एवं शान्तिपूर्ण जीवन व्यतीत करते हुए अपने महत उद्देश्यों को सहज ही प्राप्त कर सकता है। सम्पूर्ण विश्व में यह अकेली एक ऐसी पुस्तक है जो मनुष्य को एक ऐसा जीवन दर्शन प्रदान करती है, जिसके द्वारा वह जीवन–संघर्ष में विजयश्री से मंडित होकर एक सुखमय जीवन व्यतीत कर सकने में

सक्षम हो सकता है। वर्तमान परिस्थितियों में जहाँ स्वार्थ, मोह, पांखड, आडम्बर, जातीय उन्माद व साम्प्रदायिकता के साँप विष उगल रहे हैं, आपसी प्रेम, भाई–चारा, सौहार्द की जगह बम बारूद की बोली में बात हो रही है, भय, भ्रष्टाचार व अविश्वास का वातावरण कायम हो रहा है। समस्याएँ सुरसा के समान मुँह बाए खड़ी है। ऐसे समय में श्रीमद् भगवद् गीता में नीहित कर्म का आचरण समस्याओं का समाधान कर सकता है।

(1) गीता अकर्मण्यता के अन्धकार में पुरूषार्थ का प्रकाश है। मोह से मुक्ति और कर्म की युक्ति ही गीता का मूल मंत्र है।

मनुष्य की सबसे बड़ी समस्या उसकी अकर्मण्यता है। कर्महीन आलसी व्यक्ति अवश्य ही अवसादग्रस्त होगा, गीता में इसका समाधान है, अकर्मण्य नहीं बैठना, अपने नियत कर्म करो, कर्म सदा अकर्म से श्रेष्ठतर है।

नियत कुरू कर्म त्वं कर्म ज्यायो ह्यकर्मणः।
शरीर यात्रापि च ते न प्रसिद्धयेद् कर्मण।। 3/8

(2) गीता में निष्काम कर्मयोग की शिक्षा दी गयी है। मन तथा इन्द्रियों का नियन्त्रण, ध्यान योग, भगवद् ज्ञान, भगवद् प्राप्ति, भक्तियोग प्रकृति के गुण, श्रद्धा तथा सन्यास की सिद्धी आदि परम् गुह्य ज्ञान का वर्णन किया गया है। इस लिए गीता में यथार्थ ज्ञान की प्राप्ति होती है। स्वभाव समदर्शी होने लगता है।

योगस्थ कुरूकर्माणि संगव्यक्त्वा धनञजय।
सिद्धय् सिऽयोसमो भूत्वा समत्वं योग उच्यते।। 2/48

कर्मो में कुशलता

बुद्धियुक्तो जहातीह उभे सुकृत दुष्कृते।
तस्माद्योगाय युज्यस्व योगः कर्मसु कौशलम्।। 2/50

कर्म योग का संदेश है कि आज के कार्य में पूरी तरह तन्मय हो जाओ, आज जो कार्य सामने पड़ा है उसे समस्त बुद्धिमता, दिलचस्पी, सावधानी और मेहनत के साथ करो। उसमें इतने तत्पर हो जाओ कि कल की चिन्ता उसके सामने गौण हो जाए, उसका ध्यान ही न रहे। उस प्रकार जब सम्पूर्ण इच्छा शक्ति के साथ आज का काम किया जायेगा तो निःसन्देह उसका फल आशातीत सफलता युक्त होगा।

इसी प्रकार अध्याय 2/47 में कहा गया है कि

(3) फलासक्ति का त्याग

कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन।
मा कर्मफलहेतु र्भूर्मा ते संगोस्त्वव कर्माणि।।

अर्थात तुम्हे अपना कर्म करने का अधिकार है। फल की इच्छा मत करो। सचमुच यह सूत्र बहुत गहरा और गम्भीर है। इसे समझने वाले कुशलता पूर्वक कर्म करते हुए किसी भी परिस्थिति में निराश नहीं होते है। एक ही श्लोक में कर्मयोग का सार समझा दिया गया है। गीता के अनुसार कर्मो को छोड़ा नहीं जा सकता है। कर्म करना तो प्राणिमात्र का प्राकृतिक धर्म है। अतः उससे छुटकारा कैसे पाया जा सकता है। कर्म का त्याग तो मृत्यु है। शरीर मृत होने पर ही कार्य करना बंद कर देता है। गीता इस विषय में स्पष्ट कर प्रेरणा देती है कि कर्म करो फल का त्याग करो जब मनुष्य फल की इच्छा ही नही रखेगा तो उसके राजसिक व तामसिक कर्म छूट जायेंगे। फल की इच्छा न रखने पर कर्म करते हुए मनुष्य का अहं भाव स्वतः ही नष्ट हो जाता है। आसुरी प्रवृत्ति स्वतः ही नष्ट हो जायेगी और वह पूरे कर्मो से बचा रहेगा। फल न चाहने वाला व्यक्ति बुरे कर्म क्यों करेगा। इस प्रकार उसकी प्रवृत्ति राजसिक और तामसिक कार्यो की तरफ अपने आप ही नहीं रहती है। केवल कर्तव्य कर्म ही उसके लिए संसार में शेष रह जाता है।

सच्चा कर्मयोगी बनने के लिए ज्ञान और भक्तियोग की सम्मिलित साधना जरूरी है। ज्ञानी पुरूष ही अपने अन्दर निष्काम भाव को प्रश्रय दे सकता है।

(4) गीता के अनुसार सारे प्राणियों में आत्मा के दर्शन करना, आत्मा में सारे प्राणियों को देखना ही सच्चा ज्ञान है। यदि हम सभी व्यक्तियों को यह बात समझ में आ जाय कि जो चेतना हमारे शरीर का संचालन कर रही है वही सर्वशक्तिमान चेतना अन्य सभी व्यक्तियों के अन्दर निहित है। जो निश्चित ही पारस्परिक प्रेम बढ़ेगा, ऊँच–नीच, साम्प्रदायकता, जातीवाद को प्रश्रय नहीं मिलेगा, तेरा–मेरा का भेद मिट कर, राग द्वेष समाप्त होंगे, भ्रष्टाचार को रोकने में समर्थ होंगे व समाज में प्रेम व सौहार्द का माहौल बनेग।

श्रीमद् भगवद् गीता में ज्ञान तथा कर्मयोग के साथ भक्तियोग का समन्वय हमे जीवन की कठिन परिस्थितियों में अनुकूल रहने की प्रेरणा देता है। भक्तियोग जहाँ निष्काम कर्म में सहायक है, वहीं तनाव, चिन्त व अवसाद से मुक्त करता है। फल की इच्छा त्याग कर मनुष्य जो भी कर्म करता है उस परम परमेश्वर के समक्ष पूर्ण रूपेण उसी के भाव में भावित होकर तद्‌रूपता का अनुभव करते हुए सारे कर्मों को अर्पित कर दे ऐसा करने से मनुष्य चिन्तामुक्त हो जाता है, और आत्मज्ञान रूपी प्रेरणा पाकर कुशलतापूर्वक जीवन व्यतीत कर सकता है। इसके कई उदाहरण देखने को मिलते हैं। जिस प्रकार संतकबीर अपनी फकीरी शान में मस्त रहकर ईश्वर की उपासना में मगन रहते थे। इतनी विषम परिस्थितियाँ आने पर भी तनाव, चिन्ता, अवसाद उन्हें छू नहीं सके। ईश्वर विश्वासी व्यक्ति कभी भी अवसादग्रस्त नहीं हो सकता है। आजकल नास्तिकता के दौर में परिवार में तनाव, चिन्ता व अवसाद का माहौल प्रमुखता से देखने को मिल रहा है। गीता में इसका समाधान भक्तियोग के 15 वें अध्याय में मिलता है। पारिवारिक परिस्थितियाँ अनुकूल न होने व अनेकों लांछन लगने के बाद भी मीरा की जीवनी शक्ति इतनी प्रबल थी कि उस पर विष का भी कोई असर नही हुआ। ज्ञान तथा कर्मयोग के साथ भक्तियोग को मिलाकर गीता की महानता प्रदर्शित होती है। कर्मों में सौन्दर्य, कुशलता लाने के लिए यह भावना नितान्त आवश्यक है। सौन्दर्य, कुशलता, कर्मयोग, ज्ञानयोग, भक्तियोग के साथ ही गीता में ध्यानयोग पर बल दिया गया है। योगी को तपस्वियों, ज्ञानियों से कर्मकाण्ड वालों से भी श्रेष्ठ बतलाया गया है। योगी ही कर्म के निष्काम भाव से कर सकता है।

आधुनिकता के युग में जहाँ हमारे संस्कारों का ह्रास हो गया है। वहीं इससे सामाजिक विकृतियाँ भी देखने को मिल रही है। सभ्य समाज में असभ्य व अनैतिक होते बच्चों में एकाग्रता का अभाव है। इसका समाधान गीता ध्यान धारणा व क्रियायोग के अन्तर्गत मिलता है। ध्यान धारणा व क्रियायोग के सतत् अभ्यास से एक समय ऐसा आता है। जब मनुष्य की अन्तः प्रेरणा जागृत हो जाती है। मस्तिष्क विकास एवं कौशल के अभ्यास के लिए योग प्रशिक्षण की अनेक व्यवस्थाएँ मौजूद हैं। वे मनुष्य को चतुर बनाती हैं। चतुरता से सम्पन्नताओं और सफलताओं का पथ–प्रशस्त होता है। कुसंस्कारिता से छुटकारा योग से ही सम्भव है और सुसंस्कारी व्यक्तित्व का निर्माण करने के लिए योग साधना नितान्त आवश्यक है। मनुष्य की कई समस्याओं में एक भय मुत्यु है। मृत्यु कोई नहीं चाहता उसके नाम से कोई भी व्यक्ति भयभीत हो जाता है। मृत्यु प्राणिमात्र का सबसे बड़ा शत्रु है। श्रीमद् भगवद् गीता इस भय को पूर्णतया मुक्त करती है। क्योंकि वह मृत्यु को ही नकार देती है। मृत्यु है ही नहीं तो इसे लेकर इतना रोना क्यों? यह तो मात्र वस्त्र परिवर्तन है। व्यक्ति जैसे नये वस्त्रों को धारण करता है। इसी तरह अमर आत्मा जीर्ण–शीर्ण शरीर को त्याग कर नया शरीर धारण करती है।

वासांसि जीर्णानि यथा विहाय।
नवानि गृहणाति मरोऽपराणि।
तथा शरिरणि विहाय जीर्णान्यन्यानि
संयाति नवानि देहि।। 2/22

मानवमात्र की यह स्वभाविक अभिलाषा रहती है कि मैं दुःख से बचा रहूँ और सुख प्राप्त करता रहूँ। आज व्यक्ति पाश्चात्य सभ्यता का अन्धानुकरण करने के कारण अपनी वैदिक संस्कृति के मूल तत्व को भूल जाने से भोगवाद का अपनाकर दुःखसागर में गोते खा रहा है। यह ग्रन्थ पाश्चात्य सभ्यता का अन्धानुकरण करने वालो का पथ–प्रदर्शक बन कर चिरन्तन सुखदायी जीवन जीने की सफल कला का ज्ञान करायेगा। गीता में समस्त उत्तरदायित्वों को धैर्यपूर्वक वहन करते हुए किस समर्पण व सादगी के साथ जीना है। यह कला सिखाती है। गीता श्रीमद् भगवद् गीता हमे सीखाती है कि तन से, मन से स्वस्थ सबल व संतुलित होकर जीने का तरीका क्या आज के मानव की सबसे बड़ी आवश्यकता नहीं है?

गीता भक्ति, ज्ञान, कर्म का अद्‌भुत समन्वय है। मनुष्य सद् व विवेकपूर्ण चिन्तन के द्वारा उत्कृष्ट कर्म करता हुआ समाज के लिए कितना उपयोगी हो सकता है।

शरीर संशुद्धि स्वस्थ शरीर ही स्वस्थ मन का आधार है और स्वस्थ मन ही सकारात्मक ऊर्जा के माध्यम से सशक्त समाज का निर्माण कर सकता है। गीता में 'शरीर संशुद्धि' के सर्वप्रमुख कारण 'आहार–नियमन पर सूक्ष्मता से विचार हुआ है। आहार का मन पर प्रभाव असंदिग्ध है। अशुद्ध आहार 'मन' की शान्त तरंगों में विक्षोभ उत्पन्न करता है। गीता के 17 वें अध्याय के कतिपय अंश इसके प्रमाण स्वरूप उद्‌घृत किये जा सकते हैं।

सात्विक आहार–आयुः सत्त्वबलरोग्य सुख प्रीति विर्धनाः।
रस्याः स्निग्धाः स्थिरा दृद्या आहारः सात्विकप्रियाः।। 17/8

राजसी आहार– कट्म्ललवणात्युष्ण तीक्ष्ण रूक्ष विदाहिनः।
आहार राजसस्येष्टा दुःखशोका भय प्रदाः।। 17/9

तामसी आहार– यातयामं गतरसं पूर्ति पर्युषितं च यत्।
अच्छिष्टमपि चामेध्यं भोजनं तामसप्रियम्।। 17/10

आयु, बल, बुद्धि, आरोग्य, सुख, प्रीति बढ़ाने वाले रसयुक्त, चिकने, स्थिर रहने वाले मन को प्रिय लगने वाले भोज्य पदार्थ सात्विक पुरूष के प्रिय लगते हैं। कड़वे, खट्टे, लवणयुक्त, अति गर्म, तीक्ष्ण, रूखे, दाहकारक भोज्य पदार्थ राजसी पुरूष के प्रिय होते हैं। जो दुःख चिन्ता और रोगों को उत्पन्न करने वाले हैं। अधपका रसरहित दुर्गन्धयुक्त बासी, उच्छिष्ट, अपविज, भोजन तामस पुरूष को प्रिय होते हैं।

स्पष्टतः 'सात्विक पुरूष को प्रिय लगने वाले भोजन में उन सभी भोज्य पदार्थों की गणना की गयी है। जो मनुष्य को दीर्घायु, बुद्धि आरोग्य व उत्साह प्रदान करते हैं। जिन्हें रसयुक्त, चिकने, कड़वे, तीखे, चटपटे भोज्य पदार्थ जिन्हें राजसी आहार की संज्ञा दी है जो नाना प्रकार के रोगों, दुःखों व भय को आमंत्रण देने वाले हैं। 'तामसिक आहार' के अन्तर्गत सभी त्याज्य भोज्य पदार्थों का वर्णन है जो निश्चित रूप से शरीर को हानि पहुँचाने वाले हैं। 'सात्विक आहार' सतोगुण को बढ़ाता है, और सतोगुण मन को निर्मल ज्ञानी व सुखी बनाता है। 'राजसी आहार' रजोगुण की अभिवृद्धि करता है। जो मन चंचल बनाता हुआ नाना प्रकार की कामनाएँ उत्पन्न करता है। 'तामसिक आहार' तमोगुण को बढ़ाता है। वह मनुष्य को आलसी बनाता है, इसमें दो राय नही कि आलसी प्रमादी व्यक्ति समाज के लिए अनुपयुक्त तो है ही, संघर्ष, हिंसा, कलहकारी परिस्थितियों को जन्म देने वाला भी है। स्वस्थ शरीर का सूत्र गीता में मिलता है। उसके पश्चात गीता में सूक्ष्म शरीर व मन को शान्त व निर्विकार बनाने के लिए प्राणायाम की शिक्षा भी देती है। जो इस प्रकार है।

अपाने जुहवति प्राणं प्राणेऽपानं तथापरे।
प्राणापानगती रूद्ध्वा प्राणायाम परायणः।।
4/29

अपान वायु में प्राणवायु का हवन, प्राणवायु में अपान वायु का हवन या प्राण और अपान की गति का निरोध ही प्राणायाम है। आहार के संयमन के साथ प्राणों में प्राण का हवन भी प्राणायाम है। ध्यान एक मनः कायिक, साधना प्रणाली है। जिसका मानव मन पर अत्यन्त सकारात्मक प्रभाव पड़ता है।

गीता हमें मानवता का पाठ भी पढ़ाती है आज समूचे विश्व में जाति व सम्प्रदायगत वैमनस्य का जहर व्याप्त है। सर्वज्ञ घृणा, अहंकार, स्वार्थपरता का ताडण्व है। ऐसे में गीता का यह उद्घोष मानव–मन को सचेत कर देता है–

विद्या विनय सम्पन्ने ब्राह्मणे गविहस्तिनि।
शुनि चैव श्वपाकै च पण्डिताः ।। 5/18।।

प्रबोधित, प्रचेतस मानव से सबसे पहली अपेक्षा तो यह की जाती है कि वह विनम्र हो अहंकारी नही साथ ही वह ब्राहमण, गाय, हाथी, कुत्ते आशय यह कि सर्वदा सब प्राणियों में समान भाव रखने की प्रेरणा देता है।

एक अच्छा नागरिक कैसे बना जा सकता है? कैसे विश्व बन्धुत्व की परिकल्पना साकार हो सकती है, कैसे मुदिता, प्रेम, करूणा के भाव प्रसारित हो सकते है? एक 'सद्भक्त' के लक्षण बताते हुए 'गीता' इन्हीं प्रश्नों का निराकरण करती है।

अद्वेष्टा सर्वभूताना मैत्रः करूण एवं च
निर्ममो निरहंकारः सम दुःख सुखः क्षमी।। 12/13 ।।

अर्थात मनुष्य को सभी प्राणियों के प्रति मित्रता, करूणा, दया का भाव रखते हुए क्षमावान अहंकार रहित व द्वेषभाव न रखने वाला होना चाहिए। इसी प्रकार सोलहवें अध्याय में वर्णित दैवी सम्पदा युक्त गुणों के वर्णन में एक योग्य, सम्माननीय व सुसंस्कारित नागरिक के ही लक्षण अन्वेषित किये जा सकते हैं। इसमें संदेह नहीं यदि समाज के अधिकांश नागरिकों में धीरता, सहनशीलता, मधुरता, दयालुता, कोमलता, सत्यनिष्ठा व अन्तःकरण की सरलता का समावेश हो जाए, उनका जीवन द्वेष भाव से विनिर्युक्त व सादगी से भरा हो जाए तो 'वसुधैव कुटुम्बकम्' की कल्पना असम्भव सी नही लगती।

श्रीमद् भगवद् गीता में शरीर को मनमाने ढंग से कृश करते हुए धर्म का पाखण्ड करने वालों पर भी गीता चोट करती है। धर्म हमे नाना प्रकार की कामनाओं, मिथ्या, दम्भ, अहंकार से दूर ले जाता है। न कि उसमें लिप्त रहता है। अतः अहंकार व कष्ट सहन करने वाली धार्मिक क्रियाओं को गीता में आसुरी क्रिया की संज्ञा दी गई है।

प्रसन्नतापूर्वक जीवन यापन की संजीवनी का पान करना है तो गीता का आश्रय ग्रहण कीजिए, जहाँ कर्तव्य–भाव की तो अपेक्षा है लेकिन फलप्राप्ति की आकांशा ही नहीं। जहाँ प्रत्युपकार की आशा ही नही रहेगी, वहीं मनुष्य सुखी, स्वस्थ व प्रसन्न रह सकेगा। अध्याय 17 के दान–प्रसंग में इसी भाव की चर्चा है।

आत्मा के अमरत्व का शंखनाद करती गीता मृत्यु से भयभीत प्राणी को राहत देती है। मृत्यु तो जीवन नाटक की यवनिका मात्र है, जो दृश्य–परिवर्तन के लिए अनिवार्य है।

गीता एक सद्गृहस्थ अर्जुन को दिया उपदेश है। गीता में निःसग भाव से पूर्ण श्रद्धा, पूर्ण मनोयोग, पूर्ण शक्ति से उत्कृष्ट कर्म करने की शिक्षा दी गई है। कर्तव्य ही तेरा अधिकार है– यह भाव गीता में दर्शाया गया है। वस्तुतः हमारे अन्दर कर्तव्य की भावना का समावेश हो जायेगा, तो प्रत्येक व्यक्ति कर्तव्य परायण होगा, जिससे हमारे देश की अराजकता आदि बुराइयों का खात्मा स्वयं हो जायेगा। हमारे देश में शीर्ष में बैठे व नीचे तक के लोग यदि गीता से प्रेरणा लें तो इससे उन बुराइयों का समुचित उपाय मिल जायेगा। गीता में सर्वत्र उल्लास है, उत्साह है, कर्तव्यनिष्ठा है, जीवन का सुमधुर संगीत है। यह एक योग्य शिक्षक द्वारा योग्य शिष्य को प्रदत्त जीवन जीने की अनूठी शैली है। जो आज भी इतनी ही उपयुक्त व अनुकरणीय है। अन्ततः हम कह सकते है–

यत्र योगेश्वरः कृष्णो यत्र पार्थो धनुर्धरः।
तत्र श्री र्विजयो भूतिर्ध्रुवा नीतिर्मतिर्मम
विजय उत्कृष्ट जीवन जीने की कला की है।

संदर्भ सूची

तिलक, ब. ग. (2000). गीता रहस्य. पुणेः केसरी प्रकाशन।
विवेकानंद, स. (2010). भगवद्गीता पर भाषण. कोलकाताः रामकृष्ण मिशन।
स्वामी शिवानंद. (2005). भगवद्गीता का सार (हिंदी अनुवाद)। ऋषिकेशः दिव्य जीवन संस्थान।
प्रभुपाद, ए. सी. भक्तिवेदांत स्वामी. (1998). भगवद्गीता जैसी है. मुंबईः भक्तिवेदांत बुक ट्रस्ट।
श्री अरविंद. (2012). गीता का रहस्य (हिंदी अनुवाद)। पांडिचेरीः श्रीअरविंद आश्रम प्रकाशन।
योगानंद, प. (2016). भगवद्गीता का सार (हिंदी संस्करण)। लखनऊः योगदा सत्संग सोसाइटी।
राधाकृष्णन, स. (2003). भारतीय दर्शन. दिल्लीः ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।
ओशो. (2007). योग और गीता। पुणेः ओशो इंटरनेशनल फाउंडेशन।